International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(4): 102-105

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(4): 102-105
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 26-05-2018
Accepted: 28-06-2018

डॉ. राका शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
एन.के.बी.एम.जी कॉलेज, चन्दौसी,
उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ. राका शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
एन.के.बी.एम.जी कॉलेज, चन्दौसी,
उत्तर प्रदेश, भारत

डॉ. गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री की कृतियों में युगबोध

डॉ. राका शर्मा

DOI: https://doi.org/10.22271/23947519.2018.v4.i4b.1941

प्रस्तावना

डॉ. गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री का साहित्य युगबोध से ओतप्रोत है साहित्य समाज का दर्पण होता है। यह उक्ति डा. गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री की कृतियों के विषय में अक्षरशः सत्य प्रतीत होती है।

स्वदेश भक्ति से ओतप्रोत कवि का अन्तःकरण स्वदेशी वस्तुओं के उपभोग में ही अपना गौरव मानता है। कवि विदेशी वस्तुओं का प्रबल विरोधी हैं। नेहरूयशः सौरभम् में कवि का स्वदेशी वस्तुओं के प्रति ममत्व तथा विदेशी वस्तुओं के प्रति विद्वेष दृष्टिगोचर होता है।

आसेतुपञ्चनदसिन्धुकलिङ्गबङ्गं,
तीव्र निरीहनरमेधमुपेक्षमाणाः ।
आतंकिता अपि विदेशविनिर्मितानि,
वस्त्राणि वस्तुनिचयान् मनुजा अघाक्षुः ।। (ने.य. सौ. 4/6)
ननु भारत – शिल्प शातनं
विविधं वस्तु समूहमात्मनः ।
नगरेषु, जनाश्चतुष्पथे–
ष्वदहन्नाङ्गलदेश – निर्मितम् (ने.य. सौ. 5/3)

कवि विदेशी शासकों द्वारा की गयी मातृभूमि की दुरवस्था को देखकर अत्यन्त चिन्तित है। कवि अंग्रेजों के क्रूरतापूर्ण शासन तथा उसमें हुयी भारतीयों की दुरवस्था का स्मरण कर कहता है कि सुखोपभोग को उत्पन्न करने वाला भी जो भारत अपने यश से सम्पूर्ण संसार में विश्वगुरू कहलाता था, वह आज भीषण झंझावातों को सहन कर रहा है। विदेशी आक्रान्ताओं द्वारा इस देश की कला नष्ट कर दी गयी । कृषक दुखी हैं। समृद्धि, व्यापार आदि सब कुछ विनष्ट कर दिया गया। शक्ति, प्रतिभा और साधनहीन व्यथा से व्याकुल लोग न जाने कैसे अपना जीवन– यापन कर रहे है–

सुखोपभोगप्रभवोऽपि भारतो,
यशोभिरासीद् भुवनाभिनन्दितः।
प्रशासकै : पद्दलितो विदेशिभि–
र्गजेन्द्रवद् ग्राहमुखे विषीदति।। (ने.य. सौ. 4/28)
कला विशीर्णाः, कृषका : कदर्थिताः,
समृद्धवाणिज्यमपास्तमाङ्गलैः ।
विलुप्तशक्तिप्रतिभाप्रसाधनाः
कथं नु जीवन्ति जना व्यथार्दिताः ।। (ने.य. सौ. 4/30)

किस सहृदय का मन मातृभूमि की इस दुरवस्था को देखकर व्यथित नहीं होता। (ने.य. सौ. 4/29) विदेशी स्वामियों के द्वारा पैरों से रौंदे जाते हुए, अपने घर में ही, अपने देश को खरीदे हुए दास की भाँति देखकर भी कौन विवेकहीन व्यक्ति मधुयामिनियों में सुखपूर्वक सोता है। (ने.य.सौ. 2/43)

दासता एक कलंक ही है। अपने अपमान, प्रतिभा का उपहास, भू–सम्पदा, स्वर्ण, धन का हरण, विद्या, कला संस्कृति का सर्वनाश देखते हुए कौन दासता को स्वीकार करना चाहेगा–

आत्मापमानः, प्रतिभोपहासं,
भू–सम्पदा –स्वर्ण – धनापहारम् ।
विद्याकलासंस्कृति – सर्वनाशं
पश्यन्नसौ दास्यपपीहते कः।।

भीषण संतापों को सहन करने के बाद स्वाधीनता रूपी रत्न की परिश्रम द्वारा भली भाँति रक्षा करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। (ने. य. सौ. 8/29)

जातिवाद से कवि अत्यन्त दुःखी है। । वह मानव ह्रदय में उत्पन्न हो रही इस कुप्रथा को दानवीय कृत्य मानता है। दिन प्रतिदिन अबाध गति से बढ़ रही इस ऊँच–नीच की भावना को कवि लोकविनाश की संज्ञा देता है। (कर्णाभिजात्यम् 6/16) जातिवाद की जड़ता के कारण मनुष्य मनुष्य के रक्त का प्यासा हो गया है। बाल, वृद्ध और अबला को पशु की भाँति मार देता है। ग्राम जला देता है। नगर उजाड़ देता है।(सेतुबन्धम् पृष्ठ 48),(कर्णाभिजात्यम् पृष्ठ 4)

भारतीय समाज में व्याप्त जातिवाद जैसे विष को पूर्णतः खत्म कर देना चाहता है। जातिवाद से पीड़ित ह्रदयों में' धधक रही ज्वाला से समाज को सावधान करते हुए कवि कहता है–

इदं ते कौलीनम्, इदं ते चाभिजात्यं नाम, तदेवास्य कारणम् । तेन प्रवंचितास्तेन तिरस्कृताः, शुभाधारशून्याः,स्नेहवञ्चिता, अभावग्रस्ता इमे बालका असताम्, ईदृशां दुर्जनानां पाणौ निपतन्ति तेषां साहाय्य जीवितुं विवशाभवन्ति शनैः शनैरिये चैव समाजशूलाः सञ्जायन्ते । (कर्णाभिजात्यम् पृष्ठ 81)

जातिवाद की जड़ता से संत्रस्त समाज में योग्यता का कोई महत्व नहीं रहता। कर्ण के माध्यम से कवि ने जाति प्रथा पर आघात करते हुए कहा है–

अहो ! आचार्य प्रवर। कीदृशोऽयं ते न्यायः ?कीदृशीयंपरीक्षा, ययान्तेवासिनो जातिः परीक्ष्यते नास्य, व्यक्तित्वं, न चास्य प्रतिभा, नापि कृतित्वम् । कथभाचार्यमहानुभावैः कुलाभिजात्य– गर्वोन्माद सन्मुखे मत्प्रतिभापराभूतिः स्वीकृताः (कर्णाभिजात्यम् पृष्ठ 19,20)

अभिजात कुलों में उत्पन्न होने का ढिंढोरा पीटने वाले दम्भियों तथा समाज को जाति धर्म के आधार पर विभाजित करने का कवि प्रबल विरोधी है। (कर्णाभिजात्यम् 2/26)

कवि जातिवाद से ऊपर उठकर योग्यता को प्रमुख मानता है । कर्ण द्वारा कवि का भाव स्पष्ट है। (कर्णाभिजात्यम् 2/9)। जाति व्यवस्था का निर्धारण जन्म से न मानकर उसके कर्मों से माना जाना चाहिए। अपने अन्तःकरण में विद्यमान इन भावों को कवि ने कर्ण के मुख से व्यक्त करवाया है। (कर्णाभिजात्यम् 3/19)

गुरु को पक्षपाती नहीं होना चाहिए। गुरु को छात्रों की जाति व्यवस्था के आधार पर आचरण नहीं करना चाहिए। यदि कोई आचार्य ऐसा करता है तो वह निन्दनीय है। (कर्णाभिजात्यम् पृष्ठ 19–20)

भारतीय संस्कृति का दिन प्रतिदिन हो रहा अधःपतन कवि को विचलित कर देता है।

ऐश्वर्यस्य प्रभवति जने कीदृशोऽयं मदोऽपि,
येनोन्मत्तो दलति सहसा धर्मनीतिस्वरूपम्।
मर्यादा संत्यजति कलुषे पातयन्नात्मशक्ति,
मत्याचारैः सृजति निरयं गौरव मानवानाम।।
(सेतुबन्धम्:3/25)

भारतीयों का दिन प्रतिदिन हो रहां चारित्रिक पतन, अत्याचार से उदरपोषण, नागरिकों को लूटना, दुराचारियों एवं क्रूर पुरुषों द्वारा निर्बल विवश नारी और बच्चों की हत्या, नारियों' का अपहरण तथा बलात्कार करने में दिखायी देता है। (दूतांजनेयम्:–7/23)

समाज में अत्याचार तथा अनाचार फैलाने वाले रावण जैसे लोगों से कवि उस परमात्मा से डरने के लिए कहता है। (दूतांजनेयम्– 12/8)

प्रशासन तभी भारतवर्ष की रक्षा करने में समर्थ होगा जब प्रबुद्ध वर्ग अपनी विवेक शक्ति से आपस में एक दूसरे को आलम्बन देने हेतु तत्पर हो जाएँगें।

प्रशासनं भारतवर्ष रक्षा,
विधानदक्ष भविता तथैव ।
प्रबुद्धलोकाः स्वविवेक शक्त्याऽ,
न्योऽन्यं यदालम्बनतत्पराः स्युः ।। (ने.य.सौ. 8/32)

कवि भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का परम उपासक है। भारतीय संस्कृति में विहित आचरणों के अनुपालन में उसे गर्व अनुभव होता है। (ने.य. सौ. 2/24–26)

नारी के सम्बन्ध में प्रचलित अबला रूपी धारणा से कवि असहमत है। नारी तो मंगलमयी, युद्ध में विजय कराने वाली पृथ्वी की आद्याशक्ति है। ब्रह्मा की ब्रह्माणी, शंकर की पार्वती, विष्णु की लक्ष्मी, अन्नपूर्णा, मातृत्व द्वारा विश्व की रचना करने वाली तथा मायाधात्री प्रकृति है। (दूतांजनेयम् 10/22–24)

नारी पुरुष की सहधर्मिणी है। जिस प्रकार लता वृक्ष का सहारा लेकर सुख के दिनों को व्यतीत करती है पर महा अन्धड. आने पर अपनी कोमल वल्लरियों से वृक्ष को जकड़कर उसे गिरने से बचाती है ठीक उसी प्रकार नारी सुख के दिनों में पुरुष पर आश्रित रहती है पर विपत्ति आने पर सहारा देकर पुरुष को बल प्रदान करती है । (चक्रव्यूह 4/21)

अबला नारी की विवशता पर कवि को सहानुभूति है। वह कहता है कि बाल्यकाल में पिता का घर, यौवन में पति का घर तथा वृद्धावस्था में पुत्रादि द्वारा निर्मित किए गए बन्धन रूपी कारागृह मानो ब्रह्मा ने ही बना दिए हैं। (दूतांजनेयम् 13/35)

सद्गुणों से परिपूर्ण भारतीय नारी की वर्तमान समय में हो रही अवहेलना, दिन प्रतिदिन बढ़ रहे अत्याचार, तथा बलात्कार कवि के मार्मिक ह्रदय को विदीर्ण कर देती हैं। पुरुष नारी को अबला मानता हुआ बलात्कार जैसे घृणित कुकर्म से नारी को अपमानित करके अपना शौर्य प्रदर्शन करता है तथा बलात्कार की गयी नारी को व्यभिचारिणी कहता हुआ उसे उपेक्षित कर देता है। (कर्णाभिजात्यम् 7/8)

दहेज समस्या से व्यथित कवि ने यौतुकं दशमग्रहः' नामक एक एकांकी की ही रचना कर दी।

राजा और राज्य के प्रति भी कवि का अपना अलग दृष्टिकोण है। प्रजावत्सलता से विमुख, स्वार्थ रक्षा में लगे रहने वाले, विद्वानों' की बुद्धि को बन्दी बनाने वाले तथा चाटुकारो' से घिरे रहने वाले राजा का शीघ्र पतन हो जाता है। (सेतुबन्धम् 6/19,21)

राजा को प्रजा को प्रसन्न करने वाला, सत्पुरुषों एवं दुर्बलों की रक्षा करने वाला, प्रजा के हित को ध्यान रखते हुए समाज के विघातक दुष्टों, चोरों एवं तस्करों को दण्डित करने वाला, धर्म का आचरण करने वाला, विपत्ति में सन्नीति का त्याग न करने वाला होना चाहिए–

दुष्टान् लोकविघातकान् जनहिते यो दण्डयेत्तस्करान्,
लोकत्रासमपाकरोति सुजनान् रक्षन् सदा दुर्बलान्।
सन्नीति प्रजहाति नैव विपदां व्यूहेऽपि धर्मं चरन,
सद्भिरस्त्वेष प्रशस्यते भुवि यतो राजा प्रजारंजनात् ।।
(दूतांजनेयम् 14/22)

बाजारों में भ्रष्टाचार, ऊँचे मूल्य, संसाधनों का अभाव, न्याय प्रक्रिया दुर्लभ हो जाए, स्वार्थो से प्रेरित राजा यदि लोगों को पीड़ित कर रहा हो, चाटुकारों से घिरा हुआ तथा दुर्वचन बोलने वाला राजा राज्य से स्वयं पतित हो जाता है। (दूतांजनेयम् 14/25)

पृथ्वी पर वही राजा लोकप्रिय होता है जो जनहित में अपना प्रिय हित तत्काल त्याग देता है। सम्पूर्ण पृथ्वी के प्रति अनासक्त,

प्रलोभन से मुक्त, गुप्तचरों की शक्ति से न्याय करता है। (दूतांजनेयम् 14/26)
जहाँ मदान्ध राजा अपना विवेक विकृत करे लेते हैं तथा मूर्ख मंत्री चाटुकार हो जाते हैं जहाँ लोकवाणी बन्दिनी होकर विषाद का अनुभव करती है ऐसे राजा का शीघ्र पतन हो जाता है–

विकृतनिजविवेका यत्र भूपामदान्धा
विगलितमतिमन्दामन्त्रिणचाटुकाराः।
अनुभवति विषादं वन्दिनी लोकवाणी
पतनपथगतंतद्ध्वंसते राज्यमाशु।। (सेतुबंधम् 3/12)

अवसरवादी राजनेताओं से हमेशा दूर ही रहना चाहिए। उनकी कुत्सित मनोवृत्ति का चित्रण दर्शनीय है। (इन्दिराजीवनम् 4/19–22)

राजनीति की वक्रगाति और दुःसाध्यता के विषय में कवि कहता है– राजनीति में कब मनुष्य किसी का शत्रु बन जाए कब मित्र पता ही नहीं चलता। अतः बड़ी सावधानी पूर्वक राजनीति रूपी नदी को पार करना चाहिए। दुर्गम राजनीति के शिखर को जो स्पर्श करना चाहता है उसे सन्दिग्ध कण्टकों को भी हमेशा मार्ग से दूर कर देना चाहिए। (इन्दिराजीवनम् 4/23–26)
कवि ऐसे शासक के भी विरुद्ध है जो केवल प्रतिशोध के लिए ही क्रियाशील रहता है। प्रजा के हित का ध्यान नहीं रखता। (सेतुबन्धम् 7/14)
कवि मनुष्य द्वारा किये जा रहे पर्यावरण प्रदूषण, से बहुत दुखी है। वह प्राकृतिक संपदा के संरक्षण को महत्वपूर्ण मानता है। अत्यधिक वर्षा से पृथ्वी के कटाव को सुराक्षत रखने में सहायक वनों का धौर विनाश हो रहा है। पर्वतों के अंदर घोर विस्फोट किये जा रहे है। विशाल मशीनों से उत्पन्न होने वाले तथा परिवहन यन्त्रों से उत्पन्न होने वाले विषैले धुए से प्राणियों का साँस लेना भी कठिन हो गया है। तीव्र ध्वनि का उत्पन्न प्रदूषण भी लोगों के कानों और मन में घोर विकार उत्पन्न कर रहा है। उद्योगों में निरन्तर रसायनों के प्रयोग से दुर्गन्धित विषैला जल नदियों की धारा में मिलकर जीवधारियों के लिए हानिकारक हो रहा है। (भागीरथदर्शनम् 9/6–8)
मनुष्य द्वारा किये गये निर्मम प्रदूषण से खिन्न कवि बड़ी विवशता से वसन्त का स्वागत करता है। (ज्योतिष्मती–6–8) दिन प्रतिदिन बढ़ती मँहगाई, तस्करी तथा प्रशासन की निष्क्रियता पर भी कवि का ध्यान आकर्षित हुआ है (सेतुबन्धम् पृष्ठ–13)
युद्ध की विभीषिका ने सबको आतंकित किया हुआ है। युद्ध को कवि ने वज्रचकों द्वारा वंशविनाश की प्रक्रिया बताया है (कर्णाभिजात्यम पृष्ठ–110) युद्ध के दुःखद परिणाम एवं विनाशलीला की अभिव्यक्ति इन शब्दों में हुई है –

बाला अनाथा विधवाश्च नार्यो दुर्भिक्षदुःखाज्जनता विपन्ना।
युद्धं महल्लोकविनाशकं वै निन्दन्ति सन्तो जनशान्तेऽतः (सेतुबन्धम् 8/15)

सद्धर्म की रक्षा के लिए किया जाने वाला संघर्ष ही जीवन का सत्कर्म है, न कि युद्ध में समाज को विनाश की आहुति देना। (दूतांजनेयम् 12/25)
आपातस्थिति की आलोचना की गयी है। (इन्दिराजीवनम्5/1–5)
इसके साथ ही आपातस्थिति के लाभों पर भी उनकी दृष्टि गयी है। उन्होंने आपातकाल को अनुशान्तिपर्व माना है – इन्दिराजीवनम् 5/6, 7)
नसबन्दी के दुष्परिणामों पर भी कवि ने दृष्टिपात किया है। (इन्दिराजीवनम् 5/18–22)
आतंकवाद एवं हिंसा समाज को खोखला कर देते हैं। कवि आतंकवाद का विरोधी है तथा आशावादी है। (ने.य.सौ.11/ 33, 34)
इन्दिरा गाँधी तथा राजीव गाँधी जैसे नृशंस हत्याकाण्ड के बाद भी कवि आशा करता है कि यह भारतभूमि रत्नगर्भा है। उसने अतीत में भी वीर पुत्रों को जन्म दिया है। भविष्य में भी वीर पुत्रों को जन्म देगी (इन्दिराजीवनम् 17/22)
शिक्षक और विद्यार्थी दोनों ही अपनी मर्यादा भूल चुके है। आचार्यगण सदाचार रहित होकर अपने पूर्वजों को भूल चुके हैं। विद्यार्थी भी ज्ञान के मन्दिर में अशिष्टता का पाठ सीख रहे हैं (विद्या ददाति विनयम् 1/6)
कवि सभी के उत्थान की कामना करता है किंतु शिष्यों और प्रशासन के लिए नहीं क्योंकि निर्भीक होकर ये दोनों ही बिगड़ जाते हैं। (विद्या ददाति विनमम् 1/7)
वीरता जीवन का प्रमुख गुण है। वह वीर पुरुष संसार में सदा आदर के साथ प्रशांसा पाता है जो युद्ध स्थल से भागता नहीं है और शत्रु के गर्वपूर्ण, हृदय को छेदने वाले वाक्यों को सुनकर शयन कक्ष के सुख की इच्छा नहीं करता (चक्रव्यूहम् 4/20)
कवि वीरपुरुषों का प्रशंसक है। जो समय आने पर अपने प्राण न्यौछावर करके भी अपने देश तथा यश की रक्षा करते हैं। (चक्रव्यूहम् – 6/71)
वीर पुरुष देवताओं के के समान वन्दनीय होते हैं। जो कठोर दण्डों से कभी भयभीत नहीं होते। (ने.य.सौ.8/26,27)
ऐसे मनुष्यों का जन्म सफल है जिनकी संतान निरन्तर धन, वाणी, मन और कर्म से लोकहित में संलग्न रहती हैं। ने.य. सौ. 4/38)
लोक कल्याण के लिए चर्चित कार्य से सेंज्जनों का जैसा उज्ज्वल यश फैलता है वैसा अपने ही आनन्द मार्ग का अनुसरण करने वाले तथा भोग में संलग्न रहने वालों का नहीं–

तथाप्यसौ लोकहिताय चर्चिता,
कृति सतामातनुते सितं यशः ।
यथा तथानन्दपथानुवर्तिनी,
जनस्य भोगाभि रतस्य नात्मनः।। (ने.य.सौ. 4/25)

अपनी मातृभूमि के प्रति हमेशा कृतज्ञ रहना चाहिए। जिसके अन्न कण से पोषित, जल से सिञ्चित, धूलकण से रंजित शरीर को मनुष्य धारण करता है यदि उस पृथ्वी के लिए मानव कृतज्ञ नहीं है तो उसकी इस कृत्घ्नता को धिक्कार है –

तथाहि यत्रान्नकणेन पोषितं,
जलाभिषिक्तं रजसाभिरञ्जितम् ।
दधाति देहं मनुजो न तद् धरा–
कृते कृतज्ञो धिगियं कृतघ्नत्ता।। (ने.य.सौ. 4/27)

विवेक और नीति के अनुसार कार्य करना चाहिए समय पर किये गए कार्य ऋतु में वृक्ष के समान सुंदर फल देने वाले होते हैं। समय व्यतीत हो जाने पर सज्जनों की क्रियाएँ, परिणाम में निष्फल होने के कारण श्रम मांत्र ही होती हैं–

विहिता समयेन वै क्रियाः
सुफलन्तीव महीरुहा ऋतौ।
समयापगमे वृतिः सतां,
श्रम एवं प्रतिकार–निष्फला (ने.य.सौ. 6/22)

समस्त लोगों का कर्तव्य है कि वे श्रेष्ठ मानव धर्म का आचरण करते हुए अपने कार्यो मे सलग्न रहे मनुष्यों के जीवन मे ज्ञान का उपयोग लोकहित के लिए तथा शक्ति का उपयोग दुराचार के विनाश हेतु होना चाहिए। आरोग्य, तन–मन की पवित्रता, इन्द्रियों को वश में रखना, निर्भीकता और दुखियों के प्रति करुणा,वाणी मे सत्य तथा मनुष्य के लिए स्नेह एवं आत्मा में त्याग की भावना का विकास आदि भारतीय संस्कृति के संपोषक तत्व होने चाहिए। (दूतांजनेयम् 14/27)

संसार सत्य है तथा उसके विषयभोग भी सत्य ऐसा सोचकर जो मार्त्र इन्द्रियों के जाल में फँसे रहते है और कुकर्म करते रहते हैं उन्हें परमात्मा से अवश्य डरना चाहिए क्योंकि संसार में जो कुछ भी है वह उस प्रभु की माया का ही परिणाम है। सर्वशक्तिमान परमेश्वर एक ही है तथा वह एक ही आत्मा के रूप में' प्राणियों के अंदर विद्यमान है। अतः किसी से भी द्वेष करना उचित नहीं है। ईश्वर की व्यापकता, अनन्तता, एक रूपता का भाव जानते हुए मनुष्य को आततायी प्रवृत्ति से दूर रहना चाहिए तथा सभी प्राणियों के प्रति सद्भाव एवं प्रेम की भावना रखनी चाहिए। (दूतांजनेयम् 12 / 15, 17)

सर्वधर्म की भावना तथा युगानुरूप रचना करने का कवि प्रबल समर्थक है । कवि का मानना है कि युग के अनुरूप धर्म रचना करने से धर्म और युग दोनों में परस्पर सामंजस्य बना रहता है। (सेतुबन्धम् पृष्ठ 55)

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. नेहरू यश : सौरभम्
2. कर्णाभिजात्यम्
3. दूतांजनेयम्
4. सेतुबन्धम्
5. यौतुकं दशमग्रहः
6. चक्रव्यूहम्
7. भागीरथीदर्शनम्
8. इन्दिराजीवनम
9. ज्योतिष्मती
10. विद्या ददाति विनयम्